

पद १४

(रागः आनंदभैरवी - तालः केहरवा)

ऐका सावध विद्वज्जन हो, महानुभव पंडित मुनिवर हो। ब्रह्मी
सकल दृश्य जग भ्रम हो। हीच कथा सावध ऐका ॥६३॥ भ्रम
सामुग्री बहुत विध जाणा। मत अद्वैत पूर्ण मनि आणा।
असत्ख्याति सत्ख्याति आत्मख्याति मानुं नका ॥६४॥ ख्याति
अनिर्वचनीय हे माना। सदसद्रूप विलक्षण जाणा। मिथ्या
त्रैकालिक जग उमजाना। तरि हो श्रुतिसच्छास्त्र पहाना ॥६५॥
विषयाच्या सामान्य ज्ञानें। आत्माश्रयता ज्ञान क्षोभानें। सर्वाकृति

होउनिया दिसणें। आणिक जाणणें होत पहाना ॥६६॥ अंतःकरण
इंद्रिय द्वारा विषयाकृतिकृत समानदारा। मग उद्घोर्धें पूर्व संस्कारासह
विषयाकृति होत पहा ॥६७॥ ज्ञानासह ती सर्पाकृति हो। पूर्ण
अविद्याजन्य पहा हो। म्हणुनि ज्ञान विरोधि भ्रम हो। हाचि मुख्य
सिद्धांत पाहा ॥६८॥ भ्रमस्थलीं जें पदार्थ दिसती। अधिष्ठान सत्तेने
स्फुरती। ज्ञान बोध सत्तेने राहती। अधिष्ठान रूपचि सदा ॥६९॥
चिद्विवर्त जगपंचभूत हे। उपादान अज्ञाजन्य हे। ज्ञाने निखिल
बोध होत हे। ब्रह्मरूप अद्वैत सदा ॥७०॥ कवण शिष्य उपदेश गुरु
हो। निर्विकल्प घन एक ब्रह्म हो। ज्ञानरूप मार्तांड गुरु हो।
श्रीमाणिक अवधूत सदा ॥७१॥